इकाई 18 समाजशास्त्रीय पद्धति: मार्क्स, दर्खाइम और वेबर

इकाई की रूपरेखा

18.0 उद्देश्य

18.1 प्रस्तावना

18.2 विचार पद्धति: व्याख्या और महत्व

- 18.2.1 विचार पद्धति की व्याख्या
- 18.2.2 विचार पद्धति तथा शोध तकनीक में अंतर
- 18.2.3 विचार पद्धति का महत्व

18.3 कार्ल मार्क्स की विचार पद्धति

- 18.3.1 इतिहास का भौतिकवादी विश्लेषण
- 18.3.2 सामाजिक संघर्ष और परिवर्तन
- 18.3.3 "प्रैक्सिस" (praxis) की अवधारणा

18.4 एमिल दर्खाइम की विचार पद्धति

- 18.4.1 व्यक्ति और समाज
- 18.4.2 समाजशास्त्र की विषयवस्तु: सामाजिक तथ्य
- 18.4.3 समाज का प्रकार्यात्मक विश्लेषण
- 18.4.4 सामाजिक संघर्ष बनाम सामाजिक व्यवस्था

18.5 मैक्स वेबर की विचार पद्धति

- 18.5.1 "फर्स्टेहन" या अंतर्दृष्टि
- 18.5.2 आदर्श प्ररूप
- 18.5.3 कार्य कारण संबंध (causality) और ऐतिहासिक तुलना
- 18.5.4 समाजशास्त्र में मूल्य
- 18.5.5 समाजशास्त्रियों की भूमिका

18.6 सारांश

18.7 शब्दावली

18.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

18.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

18.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपके लिए संभव होगा

- कार्ल मार्क्स, एमिल दर्खाइम और मैक्स वेबर की विचार पद्धतियों का विवेचन करना
- इनकी समानताओं और भिन्नताओं पर चर्चा करना।

18.1 प्रस्तावना

खंड 2, 3 और 4 में आपने मार्क्स, दर्खाइम और वेबर के महत्वपूर्ण योगदान का बारीकी से अध्ययन किया। इस खंड में हमें उनकी विशिष्ट विचारधाराओं का तुलनात्मक अध्ययन करना

है। इससे पहले कि हम उन ठोस मुद्दों पर चर्चा करें जिन पर इन तीनों ने कार्य किया, उनकी विचार पद्धतियों का अध्ययन करना ज़रूरी है।

इस इकाई को चार भागों में विभाजित किया गया है। भाग 18.2 में विचार पद्धति की व्याख्या की गई है और इसके महत्व को बताया गया है। कार्ल मार्क्स की विचार पद्धति के बारे में हमने भाग 18.3 में चर्चा की है। भाग 18.4 में दर्खाइम और अंतिम भाग 18.5 में वेबर की विचार पद्धतियों पर ग़ौर किया गया है।

18.2 विचार पद्धति: व्याख्या और महत्व

अब तक आपने मार्क्स, दर्खाइम और वेबर के अनेक विचारों का अध्ययन किया है। मार्क्स द्वारा विकसित ऐतिहासिक भौतिकवाद, वर्ग संघर्ष और द्वंद्व की अवधारणा से आप परिचित हैं। दर्खाइम और वेबर के महत्वपूर्ण योगदान के बारे में भी आपको जानकारी है। परन्तु इनकी विचार पद्धतियों का व्यवस्थित अध्ययन आपने अब तक नहीं किया है। इसका कारण यह है कि विचार पद्धति जैसी अमूर्त परिकल्पना को समझने के लिये इन विचारकों के व्यावहारिक पहलुओं के प्रति योगदान को समझना आवश्यक है। विचार पद्धति, इस शब्द का प्रयोग हमने बार-बार किया है। अब इसकी व्याख्या करना उचित होगा।

18.2.1 विचार पद्धति की व्याख्या

विचार पद्धति से हमारा तात्पर्य शोध तकनीकी की उस प्रणाली (system) या प्रक्रिया (procedures) से है जिसके द्वारा किसी समस्या या प्रश्न का अध्ययन किया जाता है।

18.2.2 विचार पद्धति तथा शोध तकनीक में अंतर

ध्यान रहे शोध तकनीक (method) और विचार पद्धति (methodology) में अंतर है। शोध तकनीक विचार पद्धति का छोटा-सा हिस्सा मात्र है। विचार पद्धति में अनेक तकनीकों का समन्वय होता है। विभिन्न शोध तकनीकों का उपयोग कर समाजशास्त्रियों द्वारा अपनी विशिष्ट विचार पद्धतियाँ विकसित की जाती है। आइए, उदाहरण द्वारा इस भेद को स्पष्ट करें। खंड 3 में आपने पढ़ा है कि एमिल दर्खाइम ने किस प्रकार आत्महत्या का अध्ययन किया। आत्महत्या को सामाजिक तथ्य के रूप में देखना दर्खाइम की विचार पद्धति की विशेषता है।

सहगामी भिन्नता (concomitant variations) के माध्यम से आत्महत्या के सामाजिक तथ्य का अध्ययन करना दर्खाइम की शोध तकनीक है।

प्रश्न यह उठता है कि विचार पद्धति का अध्ययन क्यों आवश्यक है? इसका क्या महत्व है? क्या इन विचारकों के ठोस योगदान का अध्ययन पर्याप्त नहीं है? इस प्रश्न का उत्तर अगले उपभाग में दिया जायेगा।

18.2.3 विचार पद्धति का महत्व

विचार पद्धति का अध्ययन तकनीकों की सूची मात्र बनाना नहीं है। किसी विचारक के समस्त परिप्रेक्ष्य की झलक हमें उसकी विचार पद्धति के अध्ययन द्वारा मिलती है। समाजशास्त्र की विषयवस्तु मानव जीवन और समाज है। मनुष्य की जीवन-पद्धतियों, व्यवहारों और समस्याओं का अध्ययन ही समाजशास्त्रियों का मुख्य काम है। समाजशास्त्रीय विचार पद्धति में सामाजिक दृष्टि, व्यक्ति और समाज के बीच संबंध इत्यादि महत्वपूर्ण पक्ष शामिल हैं। विचार पद्धति के अध्ययन के द्वारा यह भी समझा जा सकता है कि विभिन्न चिंतकों के उद्देश्य और लक्ष्य क्या हैं। समाजशास्त्र की विषयवस्तु समाजशास्त्रियों से अलग नहीं है बल्कि समाजशास्त्री भी उसी समाज का अंग हैं

जिसका अध्ययन करना उनका काम है। इसलिये विचार पद्धति का अध्ययन न सिर्फ़ महत्वपूर्ण है बल्कि रोचक भी है।

आइए, अब कार्ल मार्क्स की विचार पद्धति का अध्ययन करें। खंड 2 में आपने पढ़ा है कि मार्क्स मूलत: "समाजशास्त्री" नहीं था। वह अर्थशास्त्री, राजनीतिशास्त्री और क्रांतिकारी भी था। दर्खाइम और वेबर की तरह ही मार्क्स ने समाजशास्त्र के लिये विशिष्ट विचार पद्धति विकसित नहीं की परन्तु इसमें संदेह नहीं कि विचार पद्धति की दृष्टि से तथा ठोस काम करने की दृष्टि से भी उसके विचारों का समाजशास्त्र पर गहरा प्रभाव पड़ा है और पड़ रहा है।

18.3 कार्ल मार्क्स की विचार पद्धति

कार्ल मार्क्स ने अपने समकालीन सामाजिक विज्ञान में एक नयी विचार पद्धति और अनेक नयी परिकल्पनाओं और अवधारणाओं का समावेश किया जिनका इतिहास, राजनीतिशास्त्र और समाजशास्त्र पर गहरा प्रभाव पड़ा। समाज के प्रति अपने दृष्टिकोण और उसके अध्ययन की पद्धति को मार्क्स अपने पूर्ववर्ती सामाजिक चिंतकों की अपेक्षा अधिक सुस्पष्ट और **प्रत्यक्षवादी** स्वरूप देता है। सबसे पहले आइए हम मार्क्स की विचार पद्धति (methodology) के प्रकाश में उसके इतिहास के भौतिकवादी विश्लेषण पर एक नज़र डालें।

18.3.1 इतिहास का भौतिकवादी विश्लेषण

आजीविका के लिए मनुष्य प्रकृति से जीवन-साधन प्राप्त करता है। मार्क्स के अनुसार यही इतिहास की प्रेरक शक्ति है। भौतिक साधनों का उत्पादन ही इतिहास का पहला क़दम है। प्रारंभिक आवश्यकताओं की पूर्ति से मनुष्य संतुष्ट नहीं होते। नई ज़रुरतें जन्म लेती हैं जिनकी पूर्ति के लिये मनुष्य को एक दूसरे से सामाजिक संबंध बनाने पड़ते है। भौतिक जीवन के विकास के साथ-साथ सामाजिक संबंध भी पेचीदा होते जाते हैं। समाज में श्रम का विभाजन होता है और सामाजिक वर्गों का निर्माण होता है। मार्क्स के अनुसार सामाजिक वर्गों का आधार है उत्पादन के साधनों पर स्वामित्व। परिणामस्वरूप, समाज दो वर्गों में बंट जाता है - पहला वर्ग उत्पादन के साधनों का स्वामी होता है (मालिक वर्ग) और दूसरा वर्ग स्वामित्व से वंचित है (श्रमिक वर्ग)।

आपने पहले पढ़ा है कि मार्क्स समाज की आर्थिक या भौतिक नींव पर ज़ोर देता है। यही समाज का मूल आधार है जो अन्य सामाजिक पक्षों को ढाल कर विशिष्ट स्वरूप प्रदान करता है। संपूर्ण सांस्कृतिक "अधिसंरचना" (superstructure) उत्पादन की विशिष्ट प्रणाली और उससे जुड़े अन्य सामाजिक संबंधों पर स्थित है। न्याय, राजनीति, सांस्कृतिक संरचना इत्यादि को उनके आर्थिक आधार से अलग किया जा सकता है। इस प्रकार, मार्क्स समाज को एक संपूर्ण इकाई के रूप में देखता है।

वह समाज के विभिन्न समूहों, संस्थाओं, मान्यताओं और विचारधाराओं के बीच अंतर्संबंध को खोजता है। समाज को व्यवस्था के रूप में देखना और उसके विभिन्न घटकों या अंगों के परस्पर संबंधों को देखना मार्क्स की विचार पद्धति की पहचान है।

इसके बावजूद मार्क्स मानता है कि आर्थिक या भौतिक नींव (आधार) ही मूलत: समाज की अधिसंरचना को विशिष्ट स्वरूप प्रदान करने में निर्णायक होती है। इतिहास के इस भौतिकवादी विश्लेषण को दर्शाते हुए मार्क्स इतिहास को निश्चित काल खंडों में विभाजित करता है। प्रत्येक काल खंड की विशिष्ट उत्पादन प्रणाली होती है जिसके फलस्वरूप विशिष्ट प्रकार के सामाजिक संबंध और वर्ग-संघर्ष निर्मित होते हैं।

खंड 2 में आपने मार्क्स के ऐतिहासिक भौतिकवादी विश्लेषण के बारे में पढ़ा। मार्क्स को "सापेक्षवादी इतिहासकार" कहा जाता है क्योंकि वह सामाजिक संबंधों और विचारों को उनके

विशिष्ट परिवेश में देखता है। हालांकि वह मानता है कि हर ऐतिहासिक काल में वर्ग संघर्ष पाया जाता है, फिर भी इन संघर्षों के स्वरूप और उनमें भाग लेने वाले व्यक्ति भिन्न होते हैं। उदाहरण के लिये प्राचीन युग के दास, सांमती कृषिदास और आधुनिक औद्योगिक मज़दूर समान नहीं हैं।

संक्षेप में, मार्क्स मानता है कि आर्थिक या भौतिक आधार ही अंततः समाज के अन्य अगों का स्वरूप तय करने में निर्णायक होता है। मार्क्स समाज को एक संपूर्ण इकाई मान कर उसके विभिन्न अंगों के अंतर्संबंधों का अध्ययन करता है, साथ ही वह इतिहास के काल खंडों की विशिष्टताओं को भी ध्यान में रखता है। उसके अनुसार मानव समाज के इतिहास को वर्ग संघर्षों के संदर्भ में देखना चाहिए। लेकिन वह मानता है कि हर ऐतिहासिक युग और वर्ग संघर्ष की अपनी-अपनी विशेषताएँ होती हैं।

मार्क्स की विचार पद्धति का एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू है सामाजिक संघर्ष और सामाजिक परिवर्तन। आइए, इस पर चर्चा करें।

18.3.2 सामाजिक संघर्ष और परिवर्तन

खंड 1 में आपने पढ़ा है कि किस तरह प्रारंभिक समाजशास्त्र उद्विकास की अवधारणा से प्रभावित था। ऑगस्ट कॉस्ट और हर्बर्ट और स्पेंसर जैसे चिंतक सामाजिक परिवर्तन को उद्विकास की क्रिया मानते हैं। यह कहना ग़लत नहीं होगा कि प्रारंभिक समाजशास्त्रियों ने परिवर्तन को शान्तिमय वृद्धि और क्रमिक विकास की दृष्टि से देखा है। सामाजिक संतुलन उनका मूल मंत्र है। इसलिए उन्होंने संघर्ष या तनाव को हानिकारक और व्याधिकीय अथवा रोगात्मक माना है।

इन विचारों के परिवेश को ध्यान में रखते हुए हमें मार्क्स के विचारों के महत्व का एहसास होगा। मार्क्स यह मानता है कि समाज मूलतः परिवर्तनशील है। परिवर्तन अंदरूनी अंतर्विरोधों और संघर्षों का फल है। इतिहास के प्रत्येक युग में अंतर्विरोध और तनाव होते है। समय बीतते-बीतते ये तनाव इतने तीव्र हो जाते हैं कि रूढ़ सामाजिक व्यवस्था टूट जाती है और एक नयी व्यवस्था का जन्म होता है। दूसरे शब्दों में हर युग का सर्वनाश उसके अपने अंदरूनी तनावों का परिणाम है। नया युग पुराने तनाव भरे युग की कोख से जन्म लेता है। कहने का तात्पर्य यह है कि मार्क्स संघर्ष को रोगात्मक नहीं, बल्कि एक रचनात्मक शक्ति मानता है। उसके अनुसार संघर्ष ही विकास का बीज़ है।

संघर्ष की यह परिकल्पना उसकी विशिष्ट विचार पद्धति में झलकती है जिससे वह न केवल सिर्फ अतीत और वर्तमान का अध्ययन करता है, बल्कि साथ-साथ भविष्य की प्रत्याशा भी करता है। मार्क्सवादी चिंतन का यह एक समस्यामूलक पक्ष है, जहाँ यह प्रश्न उठता है कि क्या समाज का तटस्थ अध्ययन और राजनैतिक प्रतिबद्धता परस्पर विरोधी हैं? आइए, पहले सोचिए और करिये 1 को पूरा करें तथा फिर इस प्रश्न पर चर्चा करें।

सोचिए और करिए 1

दैनिक समाचार पत्र ध्यान से पढ़कर किसी एक राष्ट्रीय या अतंराष्ट्रीय संघर्ष का चयन कीजिये। मार्क्स की विचार पद्धति का उपयोग कर इस संघर्ष का अध्ययन करने का प्रयास कीजिए। एक पृष्ठ का विवरण लिखिए और यदि संभव हो तो अपने विवरण की अध्ययन केन्द्र के अन्य विद्यार्थियों द्वारा लिखे विवरणों से तुलना कीजिए।

18.3.3 "प्रैक्सिस" (prexis) की अवधारणा

सामाज़िक सिद्धांतों और राजनैतिक प्रतिबद्धता के परस्पर संबंध या विरोध के बारे में समाजशास्त्र के उद्गम से लेकर आज तक विवाद होता रहा है। मार्क्स उस पक्ष का प्रतिनिधि है जो मानता

है कि सामाजिक सिद्धांत और राजनैतिक विचारधारा एक-दूसरे के पूरक हैं। पूँजीवादी समाज के बारे में मार्क्स अपने मत स्पष्ट करता है। उसके अनुसार पूँजीवादी समाज एक अमानवीय, अत्याचारी व्यवस्था है। उसका पूर्वानुमान यह है कि पूँजीवादी व्यवस्था अपने अंदरूनी संघर्षों और तनावों के कारण नष्ट होगी और उसकी जगह एक नई साम्यवादी व्यवस्था जन्म लेगी। सामाजिक विरोध और वर्गीकरण की समाप्ति होगी। मार्क्स "प्रैक्सिस" या आचरण पर ज़ोर देता है जिसमें न सिर्फ़ समाज का अध्ययन शामिल है, बल्कि समाज को बदलने का कार्यक्रम भी। "प्रैक्सिस" की अवधारणा के बारे में कोष्ठक 18.1 में कुछ विस्तार से जानकारी दी गई है। इसे आप पढ़ें और इस अवधारणा को स्पष्ट रूप से समझें।

कोष्ठक 18.1: प्रैक्सिस की अवधारणा

प्रैक्सिस शब्द मूलत: यूनानी है। इसका अर्थ है हर प्रकार की क्रिया या हर तरह का कार्य। लैटिन भाषा के माध्यम से इस शब्द का समावेश आधुनिक यूरोपीय भाषाओं में हुआ। अरस्तु नामक प्रख्यात यूनानी दार्शनिक ने इस शब्द के अर्थ को नपे-तुले ढंग से स्पष्ट किया और मनुष्य के कार्य तक ही सीमित किया। उसने इसकी तुलना सिद्धांत (थ्योरेटिका) से की।

मध्यकालीन यूरोपीय दर्शन में इस शब्द का प्रयोग सिद्धांतों को आचरण या व्यवहार में लाने के संबंध में किया गया है। उदाहरण के तौर पर सैद्धांतिक ज्यामिति (थ्योरेटिका) और व्यावहारिक या प्रायोगिक ज्यामिति ("प्रैक्सिस")। मध्यकालीन यूरोपीय विद्वान फ्रांसिस बेकन का यह मानना था कि सच्चा ज्ञान वही है जो आचरित होता है, जिसे "प्रैक्सिस" में लाया जाता है। लॉक ने इसके नैतिक पहलुओं पर ध्यान केन्द्रित किया। उसके अनुसार प्रैक्सिस वह क्रिया है जिससे सभी व्यक्तियों के लिए अपनी शक्ति और कर्म का उपयोग कर अच्छी और उपयोगी वस्तुएँ प्राप्त करना संभव होता है। इमानुएल कंत (Kant) ने *क्रिटीक ऑफ़ प्योर रीज़न* नामक अपनी कृति में दर्शन के सैद्धांतिक और व्यावहारिक रूप स्पष्ट किये। सिद्धांत हमें बताते हैं कि वस्तु स्थिति क्या है जब कि व्यवहार बतलाता है कि क्या होना चाहिए। कंत ने व्यावहारिक दर्शन को अधिक महत्व दिया। हीगल भी सिद्धांत और आचरण/व्यवहार के इस वर्गीकरण से सहमत था और आचरण को अधिक महत्व देता था। जब सिद्धांत और आचरण एक होते हैं तब तीसरे और उच्च स्तर की उत्पत्ति होती है। हीगल की दार्शनिक प्रणाली के तीन भाग हैं--तर्क, प्राकृतिक दर्शन और आत्मा का दर्शन। प्रत्येक भाग में सिद्धांत और व्यवहार/आचरण के द्वंद्व से एक नया, उच्च संश्लेषण प्रकट होता है। हीगल के विचार में "प्रैक्सिस" परम सत्य का क्षण है। मार्क्स की विचारधारा का केन्द्र बिन्दु "प्रैक्सिस" ही है। वह मानता है कि दर्शन को क्रांतिकारी कार्यों द्वारा आचरित कर दुनिया को बदला जा सकता है। मार्क्स के विचार में प्रैक्सिस स्वतंत्र सचेतन क्रिया है जिसके द्वारा अलगाव (alienation) को मिटाया जा सकता है। दूसरे शब्दों में प्रैक्सिस द्वारा अलगावादी श्रम को रचनात्मक स्वतंत्र कार्य में परिवर्तित किया जा सकता हैं।

मार्क्स की विचार पद्धति के इस विवेचन के बाद आइए हम दर्खाइम की समाजशास्त्रीय पद्धति के बारे में पढ़ें। जैसा कि आपको ज्ञात है कि दर्खाइम ने अपने जीवन काल में समाजशास्त्र को एक नये विषय के रूप में विकसित कर उसे एक सम्माननीय दर्जा दिया। कॉलिन्स (1985: 1123) के अनुसार दर्खाइम ने समाजशास्त्र को एक विशिष्ट विज्ञान का स्वरूप दिया जिसके अपने नियम और सिद्धांत थे।

बोध प्रश्न 1

निम्नलिखित प्रश्नों में हर प्रश्न का उत्तर तीन वाक्यों में लिखिए।

i) "शोध तकनीक" और "विचार पद्धति" में क्या अंतर है?

.....

.....

.....

ii) मार्क्स ने समाज का अध्ययन एक संपूर्ण इकाई के रूप में किस तरह किया है?

.....

.....

.....

iii) "मार्क्स सापेक्षवादी इतिहासकार है।" इसकी व्याख्या कीजिए।

.....

.....

.....

iv) निम्नलिखित वाक्यों को रिक्त स्थानों की पूर्ति द्वारा पूरा कीजिए।

क) मार्क्स के अनुसार सामाजिक परिवर्तन का प्रमुख कारण ..... है।

ख) मार्क्स के अनुसार "प्रैक्सिस" का अर्थ ..... का मेल है।

18.4 एमिल दर्खाइम की विचार पद्धति

समाजशास्त्र के लिए एक विशिष्ट पद्धति विकसित करने में एमिल दर्खाइम का महत्वपूर्ण योगदान है। अपनी कृतियों में विभिन्न प्रश्नों के सामाजिक पहलुओं पर उसने ज़ोर दिया। वैयक्तिक या मनोवैज्ञानिक व्याख्या की जगह उसने सामाजिक और समाजशास्त्रीय व्याख्या का प्रयोग किया। निश्चित रूप से दर्खाइम ने समाजशास्त्र को अपनी अलग-सी पहचान दी। इस भाग में आइए हम देखें कि किस प्रकार दर्खाइम ने व्यक्ति और समाज के अंतर्संबंध को दर्शाया है। दर्खाइम के अनुसार "सामाजिक तथ्य" (social facts) समाजशास्त्र की विषयवस्तु है, इस पर भी हमने चर्चा की है। अंत में हमने दर्खाइम द्वारा प्रस्तुत "प्रकार्यात्मक विश्लेषण" (functional analysis) की व्याख्या की है।

18.4.1 व्यक्ति और समाज

दर्खाइम के अनुसार मानव-जाति शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति से तृप्त नहीं होती। मनुष्य की इच्छाएँ और अभिलाषाएँ अपार हैं। इन्हें नियंत्रित करने के लिए सामाजिक नियम आवश्यक हैं। सामाजिक नियंत्रण के द्वारा ही व्यक्तिगत इच्छाओं को काबू में रखा जा सकता है। जब सामाजिक नियम टूट जाते हैं या नष्ट हो जाते हैं तब व्यक्ति को नियंत्रित करने वाली शक्ति भी नष्ट हो जाती है।

वे तमाम नीतियां और नियम जिनके सहारे जनसमूह अपना जीवन व्यतीत करते हैं, यदि निरर्थक हो जाते हैं तो इस स्थिति को दर्खाइम **प्रतिमानहीनता (anomie)** कहता है। लुविस कोज़र (1971: 133) मानता है कि दर्खाइम के समाजशास्त्र का प्रमुख सूत्र है -- सामाजिक संतुलन और असंतुलन। दर्खाइम उन प्रक्रियाओं की व्याख्या करना चाहता है जो सामाजिक संतुलन या असंतुलन को प्रभावित करती हैं। व्यक्तिगत इच्छाओं और सामाजिक एकता की प्रवृत्ति के बीच तनाव पर चर्चा कर वह इसका समाधान खोजता है।

तनाव का विश्लेषण करने पर ध्यान केंद्रित करने की झलक उसकी सारी कृतियों में स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। उदाहरण के तौर पर *डिविज़न ऑफ लेबर* (1893) में दर्खाइम दो प्रकार के समाजों (**यांत्रिक एकात्मकता और सावयवी एकात्मकता** पर आधारित) का वर्णन करता है।

जिस समाज में यांत्रिक एकात्मकता (mechanical solidarity) पायी जाती है उसमें **सामूहिक चेतना (collective consciousness)** व्यक्ति पर हावी होती है। जिस समाज में सावयवी एकात्मकता (organic solidarity) पायी जाती है उसमें मनुष्य के व्यक्तित्व को फलने-फूलने का अवसर मिलता है। दर्खाइम का झुकाव सावयवी एकात्मकता वाले समाज की ओर है। उसके अनुसार व्यक्तिवाद से सामाजिक बंधन ज़्यादा मजबूत बन सकते हैं। व्यक्ति और समाज के बीच अंतर्संबंध के प्रति दर्खाइम का दृष्टिकोण काफ़ी जटिल है। व्यक्ति को महत्व देकर वह समाज की भूमिका को नकारता नहीं है। दूसरी ओर, दर्खाइम यह भी नहीं कहता कि समाज की शक्ति के सामने व्यक्ति निरर्थक या तुच्छ है।

वह मानता है कि समाज का अपना एक अस्तित्व (sui generis) है। समाज हमारे से पहले भी था और हमारे बाद भी रहेगा। उसके सदस्य आएंगे और चले जाएंगे परन्तु समाज बना रहेगा। व्यक्ति समाज का निर्माण करने वाले व्यक्तियों के परे भी समाज बना रह सकता है, परन्तु व्यक्ति समाज के बिना रह नहीं सकते। व्यक्ति और समाज के बीच अंतर्संबंध के बारे में आपने ध्यान से पढ़ने के बाद अब हमें देखना है कि दर्खाइम ने समाजशास्त्र की विषयवस्तु के बारे में क्या कहा।

18.4.2 समाजशास्त्र की विषय वस्तु: सामाजिक तथ्य

अपनी प्रमुख कृतियों में *(द डिविज़न ऑफ़ लेबर इन सोसाइटी, सुइसाइड, एलिमेंटरी फ़ार्म्स ऑफ़ रिलिजस लाइफ़)* दर्खाइम मनोवैज्ञानिक व्याख्या को नकार कर समाजशास्त्रीय व्याख्या का प्रयोग करता है। उदाहरण के तौर पर *सुइसाइड* में आत्महत्या के सामाजिक कारण खोजे गये हैं। पागलपन, शराब की लत इत्यादि वैयक्तिक या मनोवैज्ञानिक कारणों पर दर्खाइम ज़ोर नहीं देता है। उसके अनुसार आत्महत्या का सामाजिक पहलू है और यह सामाजिक एकीकरण के अभाव को दर्शाता है। दर्खाइम के अनुसार समाजशास्त्र मूलत: सामाजिक तथ्यों के अध्ययन से और इन तथ्यों की समाजशास्त्रीय व्याख्या से संबंधित है। *रूल्स ऑफ़ सोशियोलॉजिकल मेथड* (1895) में दर्खाइम ने इस बात को स्पष्ट रूप से समझाया है। वह इस बात को स्थापित करना चाहता है कि समाजशास्त्र भी एक विज्ञान बन सकता है, जो कि अन्य विज्ञानों के स्वरूप पर आधारित है। समाजशास्त्र की एक विशिष्ट विषय वस्तु होना आवश्यक है, किन्तु तथ्यों का प्रेक्षण और उनकी व्याख्या अन्य विज्ञानों की तरह ही होनी चाहिए।

समाज के वैज्ञानिक अध्ययन को संभव बनाने के लिए दर्खाइम दो नियम प्रस्तुत करता है: (i) सामाजिक तथ्य वस्तुओं के समान हैं. (ii) सामाजिक तथ्य व्यक्तियों पर बाधक होते हैं।

आइए, पहले नियम पर चर्चा करें। दर्खाइम का कहना है कि सामाजिक तथ्यों का अध्ययन करने से पहले हमें अपनी पूर्वकल्पनाओं और पूर्वाग्रहों को हटाकर सामाजिक तथ्य को बाहर से देखना चाहिये। भौतिक या प्राकृतिक तथ्यों की तरह ही सामाजिक तथ्यों को हमें खोजना और देखना होगा। एक उदाहरण से इस बात को स्पष्ट किया जा सकता है। आपको भारत में लोकतांत्रिक प्रणाली का अध्ययन करना है। दर्खाइम के अनुसार आपको सबसे पहले अपनी पूर्व कल्पनाओं को अलग करना होगा, उदाहरण के तौर पर भारत में "लोकतांत्रिक प्रणाली असफल है" या "लोकतंत्र जनता का राज है" इत्यादि। आपको लोकतांत्रिक प्रणाली का परीक्षण तटस्थ, निष्पक्ष और वैज्ञानिक तरीक़े से करना होगा। सामाजिक तथ्यों को हम कैसे पहचानें? इस प्रश्न का उत्तर दूसरे नियम में मिलता है। दर्खाइम का कहना है कि सामाजिक तथ्य व्यक्ति पर बाधक होते हैं। चुनाव के दौरान लोकतांत्रिक प्रणाली स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। राजनैतिक उम्मीदवार लोगों से वोट मांगते हैं। लोग चुनाव करने या कोई निर्णय लेने पर विवेश हो जाते हैं। इस प्रकार, सामाजिक तथ्य व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करते हैं।

आइए, अब दूसरा उदाहरण देखें। क्रिकेट मैच के दौरान जब सचिन तेंदुलकर शानदार छक्का मारता है तब सारे दर्शक तालियों से इसका स्वागत करते हैं। कुछ दर्शक न चाहने पर भी दूसरों की तरह उत्तेजित हो जाते हैं। दर्शक-गण में शामिल होने के फलस्वरूप ऐसे दर्शक एक विशेष प्रकार का बर्ताव करने पर विवश हो जाते हैं। सामाजिक तथ्यों को वस्तु के रूप में देखना और उनका बाधक स्वरूप पहचानना दर्खाइम की समाजशास्त्रीय पद्धति का मूल-तंत्र है (आरों 1970: 72)।

सामाजिक तथ्यों का बाहर से और निरपेक्ष रूप से परीक्षण करने की यह धारणा समाजशास्त्र पर विज्ञान का प्रभाव स्पष्ट रूप से दर्शाती है। आपको याद होगा कि दर्खाइम के जीवन-काल में समाजशास्त्र एक नया विषय था जो अपना विशिष्ट स्थान बनाने का प्रयास कर रहा था। समाजशास्त्रीय पद्धति में दर्खाइम के योगदान को हमें इसी संदर्भ में देखना चाहिए। आइए, अब हम दर्खाइम द्वारा प्रस्तुत प्रकार्यात्मक विश्लेषण (functional analysis) के बारे में संक्षेप में पढ़ें।

18.4.3 समाज का प्रकार्यात्मक विश्लेषण

समाजशास्त्रीय पद्धति के क्षेत्र में दर्खाइम का एक महत्वपूर्ण योगदान प्रकार्यात्मक व्याख्या का विश्लेषण है। सामाजिक प्रक्रियाओं को अध्ययन का केन्द्र बनाने की प्रवृत्ति जीव-विज्ञान से ली गई है। जीव का हर अंग या अवयव एक विशेष कार्य करता है, जिससे वह जीवित और स्वस्थ रहता है। यदि हम मनुष्य के शरीर के विभिन्न अंगों को प्रकार्यात्मक दृष्टि से देखें तो यह पाया जाता है कि प्रत्येक अंग पूरे शरीर को बनाए रखने में सहायक है। हृदय शरीर में रक्त संचरित करता है, फेफड़े हवा को शुद्ध करते हैं, अमाशय खाना पचाने का काम करता है, मस्तिक दूसरे अंगों को नियंत्रण में रखता है। इन विभिन्न अंगों के संपूर्ण प्रकार्य ही हमें जीवित और स्वस्थ रखते हैं।

समाज के प्रकार्यात्मक अध्ययन के दौरान समाज को पूर्ण और स्वस्थ बनाए रखने में विभिन्न सामाजिक व्यवस्थाओं और संस्थाओं की भूमिका को अध्ययन का केन्द्र बनाया जाता है। सामाजिक तथ्यों के अध्ययन के लिए दर्खाइम ने स्पष्ट रूप से प्रकार्यात्मक प्रक्रिया की स्थापना की। दर्खाइम (1966: 97) के अनुसार, "तथ्यों की व्याख्या के लिए प्रकार्यों का निर्धारण आवश्यक है एक सामाजिक तथ्य की व्याख्या के लिए वह कारण मात्र दिखा देना जिस पर वह आधारित है, पर्याप्त नहीं है, सामाजिक व्यवस्था स्थापित करने में उसके प्रकार्यों को दिखाना भी आवश्यक है"(रूल्स ऑफ़ सोशियोलॉजिकल मैथड)।

दूसरे शब्दों में, दर्खाइम के लिए तथ्यों की समाजशास्त्रीय समझ तब तक पूरी नहीं होगी जब तक कि सामाजिक व्यवस्था कायम करने में इन तथ्यों के प्रकार्यों या उनकी भूमिका को न समझा जाए। दर्खाइम की समस्त कृतियों में प्रकार्य की अवधारणा की महत्वपूर्ण भूमिका है। *डिविज़न ऑफ़ लेबर* में वह यह देखने का प्रयास करता है कि व्यावसायिक विशिष्टीकरण की प्रक्रिया किस प्रकार सामाजिक व्यवस्था और संबद्धता बनाए रखने में काम करती है। इस विषय में आपको इस खंड की इकाई 20 में अधिक विस्तार से जानकारी मिलेगी। इकाई 19 में आपको मालूम होगा कि दर्खाइम ने *एलिमेंट्री फ़ार्म्स ऑफ़ रिलीजस लाइफ़* में यह दिखाया है कि धार्मिक अनुष्ठान और विश्वास के प्रकार्य सामाजिक बंधनों को मज़बूत करते हैं। दर्खाइम की सारी कृतियों में सामाजिक व्यवस्था के निरूपण की आवश्यकता दिखाई देती है। इस बिंदु पर दर्खाइम की प्रकार्यात्मक विश्लेषण पद्धति को आत्मसात करने हेतु सोचिए और करिए 2 को पूरा करें।

सोचिए और करिए 2

अपने समाज की दो सामाजिक संस्थाओं का चयन कीजिए। उदाहरण के तौर पर विवाह, परिवार, जाति, गोत्र इत्यादि। प्रकार्यात्मक विश्लेण कर इन्हें समझाने का प्रयास कीजिए। दो पृष्ठों का निबंध लिखिए और यदि संभव हो तो अपने अध्ययन केन्द्र के अन्य विद्यर्थियों के निबंधों के साथ इसकी तुलना कीजिए।

संक्षेप में दर्खाइम ने समाजशास्त्र के लिए एक ऐसी विषय वस्तु निर्धारित करने का प्रयास किया जिसके द्वारा समाजशास्त्री सामाजिक तथ्यों के प्रति वस्तुनिष्ठ और तटस्थ दृष्टिकोण अपना सकें। दर्खाइम के अनुसार समाजशास्त्री का काम सामाजिक तथ्यों को समाजशास्त्रीय ढंग से समझाना है। इस प्रकार सामाजिक व्यवस्था बनाए रखने में सहायक सामाजिक तथ्यों के प्रकार्यों से जुड़ी व्याख्या संभव होगी।

यदि आपने मार्क्स और दर्खाइम की विचार पद्धतियों पर उपरोक्त पृष्ठ ध्यान से पढ़े हैं तो दोनों में एक मुख्य अंतर अवश्य पाया होगा, वह यह कि मार्क्स द्वंद्व और संघर्ष पर ज़ोर देता है, जबकि दर्खाइम व्यवस्था पर। आइए अब इन चिंतकों के सापेक्ष महत्व की तुलना संक्षेप में करें। किन्तु इससे पहले आपने अभी तक कितना समझा है, यह बोध प्रश्न 2 को पूरा कर देख लें।

बोध प्रश्न 2

i) निम्नलिखित वाक्यों के सामने "सही या ग़लत" लिखिये।

क) दर्खाइम के अनुसार सर्वशक्तिमान समाज की तुलना में व्यक्ति निरर्थक है।
सही/ग़लत

ख) सावयवी एकात्मता का तात्पर्य यह है कि व्यक्ति समाज से अलग रह सकते हैं।
सही/ग़लत

ii) निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर तीन पंक्तियों में दें।

क) किसी "सामाजिक तथ्य" को किस प्रकार पहचाना जा सकता है? एक उदाहरण दें।

.....

.....

.....

ख) दर्खाइम के प्रकार्यात्मक विश्लेषण के दो उदाहरण दें।

.....

.....

.....

18.4.4 सामाजिक संघर्ष बनाम सामाजिक व्यवस्था

समाज के विकास के लिए मार्क्स ने द्वंद्व और संघर्ष की भूमिका पर बल दिया है जबकि दर्खाइम ने सामंजस्य और व्यवस्था पर। जहाँ एक ओर दर्खाइम, संघर्ष या द्वंद्व को रोगात्मक, विकृति या असामान्य मानता है वहीं मार्क्स इसे सामाजिक परिवर्तन का पहिया मानता है। एक और जहां दर्खाइम सामाजिक तथ्यों का अध्ययन सामाजिक व्यवस्था में उसके योगदान की दृष्टि से करता है वहीं मार्क्स सतत समाज में विद्यमान विसंगतियों, अंतर्विरोधों और तत्जन्य तनावों की खोज में रहता है जिससे कि समाज में परिवर्तन होंगे।

ध्यान देने की बात यह है कि दोनों ही चिंतक समाज को अपने आप में एक वास्तविकता मान

कर चलते हैं। मार्क्स विभिन्न उपव्यवस्थाओं के अंतर्संबधों को देखकर समाज को एक सम्पूर्ण इकाई की दृष्टि से देखता है, और मानता है कि सम्पूर्ण समाज का एक चरण से दूसरे में परिवर्तन होना ऐतिहासिक गति से सम्बद्ध है। दर्खाइम भी ऐसे समाज की चर्चा करता है जिसका अपना एक अस्तित्व है। दोनों चिंतक वैयक्तिक आचरण और भावनाओं की अपेक्षा सामाजिक सम्पूर्णता पर बल देते हैं, क्योंकि उनके अनुसार वैयक्तिक आचरण और भावनाएँ किसी सामाजिक परिवेश विशेष की उपज होती हैं। अत: मार्क्स और दर्खाइम दोनों को सामाजिक यथार्थवादी कहा जा सकता है।

यह मुद्दा और प्रासंगिक हो जाता है जब उनकी विचार पद्धति की तुलना मैक्स वेबर की विचार पद्धति के साथ की जाती है। वेबर की समाजशास्त्रीय पद्धति एकदम अलग है। वेबर का अध्ययन सामाजिक क्रिया के अध्ययन से शुरू होता है। वह वैयक्तिक-आचरण पर बल देता है जो कि उसके अनुसार व्यक्ति की मनोवृत्ति, मूल्यों और विश्वासों से प्रभावित होता है। अपने आस-पास के संसार को कर्ता जो अर्थ देता है वेबर उसी की व्याख्या करता है। आइए अब उसकी समाजशास्त्रीय पद्धति का थोड़ा विस्तार से अध्ययन करें।

18.5 मैक्स वेबर की विचार पद्धति

मैक्स वेबर के अनुसार, सामाजिक क्रिया का एक विस्तृत विज्ञान ही समाजशास्त्र है। वह कर्ता द्वारा अपने विशिष्ट सामाजिक-ऐतिहासिक संदर्भ में की गई क्रिया और पारस्परिक क्रिया को दिए गए व्यक्तिपरक अर्थ पर ज़ोर देता है। यही उसकी विशिष्ट विचारपद्धति का द्योतक है। वह इस बात से भी सहमत नहीं है कि समाज विज्ञान भी अन्य सामान्य विज्ञानों (प्राकृतिक विज्ञानों) के रूप में विकसित किया जा सकता है। इस प्रकार वह समाज विज्ञानों के लिए अपनी अलग विशिष्ट विषय वस्तु और पद्धतियों की रूपरेखा प्रस्तुत करता है।

सामान्य (प्राकृतिक) विज्ञान और समाजशास्त्र या समाज (सांस्कृतिक) विज्ञान के उद्देश्यों और पद्धतियों के समान होने की प्रत्यक्षवादी विचारधारा का भी वेबर खंडन करता है। उसका मानना है कि अन्य चीज़ों या प्राकृतिक वस्तुओं के विपरीत मनुष्य में एक प्रकार की अंत: या अंदरूनी अभिप्रेरणा होती है जिसे समझने का प्रयास समाजशास्त्रियों को करना चाहिए। इसी को समझने-समझाने के लिए वेबर एक अलग समाजशास्त्रीय पद्धति प्रस्तुत करता है। आइए अब इस पद्धति का अध्ययन करें।

18.5.1 "फर्स्टेहन" या अंतर्दृष्टि

वेबर का मत है कि एक सामान्य वैज्ञानिक द्वारा किसी प्राकृतिक तथ्य का परीक्षण बाहर से ही होता है। उदाहरण के तौर पर, एक रसायनशास्त्री द्वारा किसी रसायन की विशेषताओं का अध्ययन बाहर से ही किया जा सकता है। परन्तु एक समाजशास्त्री द्वारा मानव समाज और संस्कृति को समझने का प्रयास मानव होने के नाते उस समाज या संस्कृति के सहभागी या आंतरिक सदस्य होने की हैसियत से किया जाता है। मनुष्य होने के नाते दूसरे मनुष्य की अभिप्रेरणाओं और भावनाओं को कर्ता द्वारा दिए गए व्यक्तिपरक अर्थ को जांचने से समाजशास्त्री द्वारा मानव क्रिया समझी जा सकती है। इस तरह समाजशास्त्रीय व्याख्या, अन्य विज्ञानों की व्याख्या से मूलभूत रूप से भिन्न है। वेबर के मतानुसार समाजशास्त्र को फर्स्टेहन (जर्मन भाषा का शब्द जिसका अर्थ है समझना) अर्थात अंतर्दृष्टि या व्यक्तिगत बोध की पद्धति अपनानी चाहिए। फर्स्टेहन पद्धति के अनुसार समाजशास्त्री को कर्ता की भावनाओं और उसकी परिस्थिति की समझ की व्याख्या करने का प्रयास कर उसकी अभिप्रेरणा की कल्पना करनी होगी। पर क्या फर्स्टेहन समाजशास्त्रीय व्याख्या के लिए पर्याप्त है? वेबर के अनुसार यह प्रथम चरण ही है। विश्लेषण का दूसरा चरण है कार्य कारण संबंधी व्याख्या करना, यानी किसी भी सामाजिक क्रिया

के पीछे छिपे कारणों को तलाश करना। समाजशास्त्रीय विश्लेषण को सरल बनाने के लिए वेबर ने एक महत्वपूर्ण पद्धति विकसित की जिसके बारे में आपने इस पाठ्यक्रम के खंड 4 में विस्तारपूर्वक पढ़ा है। यह है आदर्श प्ररूप, जिसके विषय में हमने यहां पुनः चर्चा की है।

18.5.2 आदर्श प्ररूप

तुलनात्मक अध्ययन के लिए आदर्श प्ररूप एक बुनियादी पद्धति तैयार करता है। यह अध्ययन किए जाने वाले तथ्य की मूलभूत विशेषताओं के साथ एक प्रकार का नमूना या मॉडल तैयार करता है। एक प्रकार से यह किसी विशेष वास्तविकता की अतिरंजित तस्वीर है। उदाहरण के लिए यदि किसी भारतीय सिनेमा के खलनायक का आदर्श प्ररूप तैयार करना हो तो धूर्त आँखों वाले, बड़ी मूछों वाले, भारी आवाज़ वाले, क्रूर हँसीवाले, चमकीले सूट पहने, बंदूकधारी, गुंडों से घिरे किसी व्यक्ति की कल्पना की जा सकती है। हां, भले ही भारतीय सिनेमा के सभी खलनायक ऐसे ही नहीं होते हैं, किन्तु सामान्यतया पाई जाने वाली विशेषताओं के साथ एक विश्लेषणात्मक ख़ाका अवश्य बनाया जा सकता है। इस आदर्श प्ररूप को मापदंड बनाकर समाजशास्त्रियों द्वारा समाज में पाई जाने वाली वास्तविकताओं की तुलना की जा सकती है।

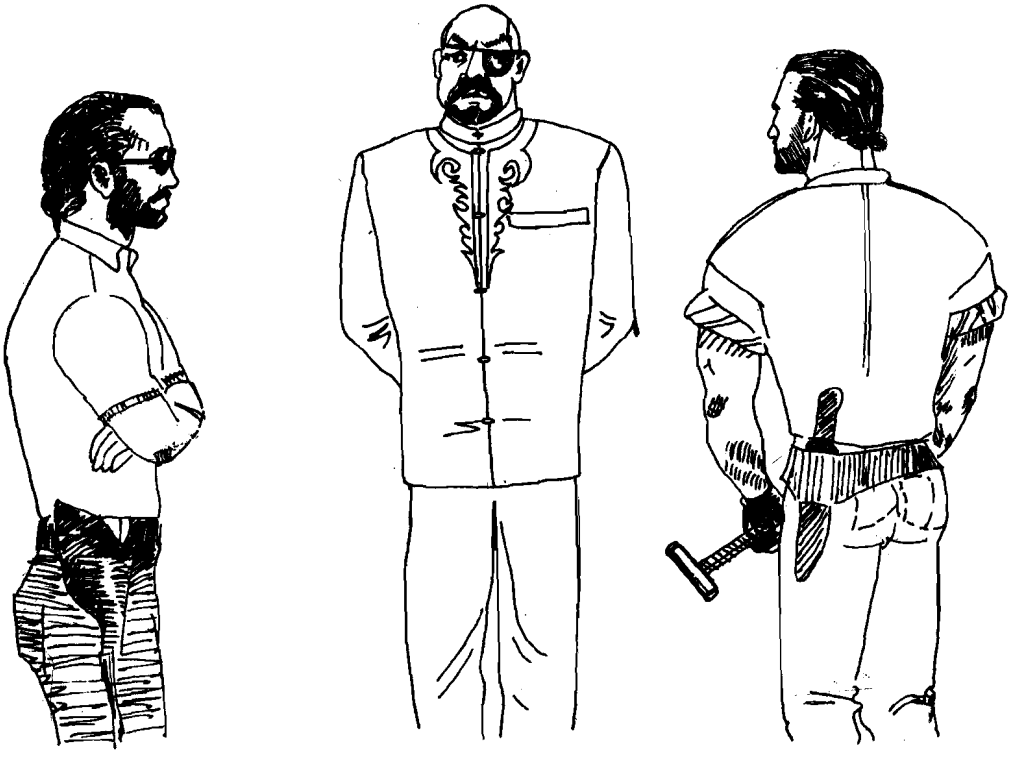

चित्र 18.1: फिल्मी खलनायक का आदर्श-प्ररूप

आदर्श प्ररूप काल्पनिक उदाहरण तैयार करने में सहायक होता है। यहां भाव यह है कि आदर्श प्ररूप के द्वारा समाजशास्त्री वास्तविकता को मापकर उस के महत्वपूर्ण पक्षों को स्पष्ट करें। खंड 4 में आपने देखा कि किस प्रकार वेबर ने "प्रोटेस्टेंट नैतिकता और पूँजीवादी प्रवृत्ति" के आदर्श प्ररूपों का प्रयोग कर इन दोनों के बीच संबंध को स्पष्ट किया है। वेबर के "धर्म के समाजशास्त्र" से आप वाकिफ़ हैं जो ऐतिहासिकता को प्रतिबिम्बित करता है। 'ऐतिहासिकता' वेबर की पद्धति का एक महत्वपूर्ण पक्ष है। इस बिंदु पर वेबर द्वारा दी गई आदर्श प्ररूप की अवधारणा को आत्मसात करने हेतु सोचिए और करिए 3 को पूरा करें।

सोचिए और करिए 3

संयुक्त परिवार अथवा/और शहरी गंदी बस्ती में जीवन के आदर्श प्ररूप बनाइए। यथार्थ की तुलना इन आदर्श प्ररूपों से कीजिए। यह बताइये कि आपके आदर्श प्ररूपों और यथार्थ में कितना अंतर है?

18.5.3 कार्य कारण संबंध (causality) और ऐतिहासिक तुलना

हमने अब तक वेबर की समाजशास्त्रीय पद्धति के विषय में जो पढ़ा है, वह यह है कि वेबर सामाजिक कार्य के अध्ययन पर बल देता है। इसके लिए वह कर्ता की अभिप्रेरणा और उसके मूल्यों की व्याख्यात्मक समझ को उचित मानता है। आदर्श प्ररूप का प्रयोग समाजशास्त्रियों को ठोस वास्तविक घटनाओं के लिए अंतर्दृष्टि प्रदान करने में सहायक होगा। वेबर कारणों की व्याख्या को भी महत्व देता है। किन्तु साथ ही वह यह भी कहता है कि चूंकि मनुष्य समाज इतना उलझा हुआ है कि तथ्यों को समझाने के लिए कोई एक या संपूर्ण कारण दे सकना संभव नहीं है। अत: वह कारणों के बाहुल्य की बात करता है। कुछ कारण अन्य कारणों से अधिक महत्वपूर्ण होते है। उदाहरण के लिए पूँजीवाद की व्याख्या करते हुए वेबर धार्मिक नैतिकता की बात करता है। किन्तु उसका यह भी कहना नहीं है कि मात्र धार्मिक मूल्य ही आधुनिक पूंजीवाद के विकास का कारण हैं। पूंजीवाद के विकास को प्रभावित करने वाले धार्मिक मूल्यों के महत्व को समझाने के लिए वह ऐतिहासिक तुलना की पद्धति इस्तेमाल करता है।

आपने इस पाठ्यक्रम के खंड 4 की इकाई 15 में देखा ही है कि किस प्रकार वेबर ने पश्चिम में पूँजीवाद के विकास और प्राचीन चीन और भारत में इसके अभाव की तुलना की है। इस अंतर का कारण बताते हुए वह यथोचित नैतिकता और मूल्य व्यवस्था को अंत में इसका कारण ठहराता है। यह व्यवस्था पश्चिम में थी, किन्तु चीन और भारत में नहीं। अत: वेबर की समाजशास्त्रीय पद्धति में कार्य कारण संबंध की व्याख्या और शोध भी शामिल हैं लेकिन वह एक ही कार्य कारण व्याख्या को नकार देता है। चूंकि वेबर सामाजिक क्रिया मूल्यों और विश्वासों की इतनी अधिक बातें करता है, इसलिए समाजशास्त्र में मूल्यों के प्रति उसका क्या रुख है जानना रोचक होगा। क्या वेबर को, मार्क्स की तरह सिद्धांत और राजनीति को मिला देना पंसद था? कया दर्खाइम की शुद्ध वस्तुपरकता उसे पंसद थी? इसकी व्याख्या अगले उपभाग में दी गई है।

18.5.4 समाजशास्त्र में मूल्य

विज्ञान को बहुधा सत्य के लिए तटस्थ खोज कहा गया है। इसे मूल्य-विमुक्त और निष्पक्ष माना गया है। आपने देखा कि किस प्रकार दर्खाइम सामाजिक तथ्यों के वस्तुनिष्ठ या निष्पक्ष अध्ययन की बात करता है और किस प्रकार समाजशास्त्रियों को स्वयं को पूर्वाग्रहों और पूर्व कल्पनाओं से मुक्त रखना चाहिए। क्या वस्तुनिष्ठ और मूल्य-विमुक्त विज्ञान (प्राकृतिक या सामाजिक विज्ञान) संभव है? वेबर के अनुसार, अध्ययन के लिए विषय विशेष चुनने में मूल्यों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। आपने समाजशास्त्र को ही वैकल्पिक पाठ्यक्रम के लिए क्यों चुना? कुछ मूल्यों ने आपका मार्ग दर्शन कराया होगा। आपने या तो इसे रोचक पाया, या आसान या संभवत: आपको अन्य वैकल्पिक पाठ्यक्रम पसंद नहीं आए। उसी प्रकार यदि कोई वैज्ञानिक रसायन का अध्ययन करने का निर्णय ले और कोई वैज्ञानिक ग्रामीण भारत के रीति-रिवाजों का अध्ययन करना चाहे, तो उसके निर्णय भी किसी मूल्य के आधार पर ही किए गए होंगे।

किन्तु वेबर ने मूल्य निर्धारण (value orientation) और मूल्य निर्णय (value-judgement) के बीच स्पष्ट अंतर किया है। एक शोधकर्ता या वैज्ञानिक किसी विषय विशेष के अध्ययन के लिए कुछ मूल्य निर्धारण द्वारा अभिमुख है किन्तु वेबर के अनुसार उस विषय पर उसे किसी प्रकार का नैतिक मूल्यांकन नहीं देना चाहिए। उसे विषय के संबंध में नैतिक तटस्थता बरतनी चाहिए।

उसका काम तथ्यों का अध्ययन करना है, न कि यह निर्णय देना कि वह अच्छा या बुरा है। संक्षेप में यही वेबर की समाजशास्त्रीय पद्धति और उसमें उसका योगदान है।

अब तक आपने समाजशास्त्र के तीन संस्थापकों की विचार पद्धतियों के विषय में पढ़ा है। यहां एक महत्वपूर्ण प्रश्न उठाना आवश्यक है। वह यह कि उन्होंने समाजशास्त्रियों की भूमिका और कार्य-भार की किस प्रकार व्याख्या की। इस प्रश्न के उत्तर से आपको संक्षेप में उनके द्वारा बताए गए सामाजिक तथ्यों के अध्ययन के लक्ष्य और उद्देश्यों की जानकारी मिलेगी।

18.5.5 समाजशास्त्रियों की भूमिका

आपने पढ़ा कि किस प्रकार एमिल दर्खाइम ने समाजशास्त्र की सामाजिक तथ्यों के अध्ययन के रूप में व्याख्या की। उसके अनुसार समाजशास्त्री अपनी पूर्व-कल्पनाओं और पूर्वाग्रहों को छोड़ कर तटस्थ रूप से सामाजिक तथ्यों और उनकी विशेषताओं का अध्ययन कर सामाजिक व्यवस्था बनाए रखने में सामाजिक संस्थाओं की भूमिका का अध्ययन करें।

वेबर के अनुसार समाजशास्त्रियों को मनुष्य की अरिप्रेरणा को समझ कर अंतर्दृष्टि अथवा व्यक्तिगत बोध से उसका अध्ययन करना चाहिए। समाज और संस्कृति को समझने में समाजशास्त्री का स्वयं समाज का भाग होना सहायक होता है क्योंकि समाजशास्त्री द्वारा सामाजिक तथ्यों का अध्ययन समाज के अंदर से ही किया जाता है। आदर्श प्ररूप और ऐतिहासिक तुलना द्वारा कार्य कारण संबंध भी खोजे जा सकते हैं। किन्तु नैतिक तटस्थता बनाए रखना आवश्यक है। मार्क्स के विचारों में समाजशास्त्री की भूमिका और राजनैतिक कार्यकर्ता की भूमिका एक-दूसरे से जुड़ी हुई है। मार्क्स के अनुसार तनाव और संघर्ष जो कि समाज की विशेषता है, इनके अध्ययन से समाजशास्त्री विरोध और शोषण से मुक्त एक आदर्श समाज की कल्पना कर उसके लिए रास्ता बनाएं।

बोध प्रश्न 3

i) निम्नलिखित वाक्यों को रिक्त स्थानों की पूर्ति द्वारा पूरा कीजिए।

   क) वेबर के अनुसार अपने व्यवहार और क्रियाओं को कर्ता द्वारा दिए गए ..... को जांचने से समाजशास्त्री मानव क्रियाओं को समझ सकते हैं।

   ख) विद्यमान वास्तविकताओं को मापने के लिए ..... को मापदंड के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है।

   ग) वेबर मूल्य निर्धारण (value orientation) और ..... में स्पष्ट अंतर करता है।

ii) निम्नलिखित कथन सही हैं या ग़लत, बताइए।

   क) वेबर का मानना था कि समाजशास्त्रियों को सामाजिक तथ्यों को समझने के लिए कोई एक या संपूर्ण कारण का होना आवश्यक है। सही/ग़लत

   ख) चूँकि समाजशास्त्र मूल्य विमुक्त नहीं हो सकता है, अतः समाजशास्त्रियों द्वारा नैतिक तटस्थता बनाए रखना भी संभव नहीं है। सही/ग़लत

18.6 सारांश

इस इकाई में हमने पढ़ा है कि विचार पद्धति क्या है और उसका अध्ययन क्यों आवश्यक है। इसके बाद हमने समाजशास्त्र के तीन संस्थापकों की विचार पद्धतियों और दृष्टिकोणों का विश्लेषण किया और साथ ही उनकी तुलना की।

हमने देखा कि किस प्रकार मार्क्स ने भौतिकवादी पद्धति द्वारा समाज के इतिहास की अवधारणा दी। सामाजिक संस्थाओं के आपसी संबंधों का अध्ययन करते हुए मार्क्स ने समाज की परिवर्तनशील प्रवृत्ति पर ज़ोर दिया। उसके अनुसार सामाजिक संघर्ष ही परिवर्तन का कारण है और यह राजनैतिक रूप से प्रतिबद्ध समाजशास्त्रियों का काम है कि वे भविष्य के वर्ग रहित अर्थात् साम्यवादी समाज की कल्पना और उसका अध्ययन करें।

एमिल दर्खाइम समाजशास्त्र को एक वैध या प्रतिष्ठित विज्ञान के रूप में स्थापित करना चाहता था। उसने समाजशास्त्रीय पद्धतियों में कुछ अनुशासन लाने का प्रयास किया। उसने सामाजिक तथ्यों को समाजशास्त्रीय खोज की उचित विषय वस्तु माना और मनोवैज्ञानिक तथा समाजशास्त्री व्याख्या में अंतर स्पष्ट किया। दर्खाइम ने एक स्पष्ट प्रकार्यात्मक विश्लेषण की पद्धति बतलाई जो कि आज भी प्रयोग में लाई जाती है।

मैक्स वेबर की समाजशास्त्रीय पद्धति ने समाजशास्त्र में अध्ययन का केन्द्र बदल दिया। जब कि दर्खाइम और मार्क्स सामाजिक यथार्थ के रास्ते चले, वेबर ने मनुष्य की अभिप्रेरणा की अंतर्दृष्टि द्वारा समझ पर ज़ोर दिया। उसने तुलनात्मक ऐतिहासिक अध्ययन को अपनाया और सामाजिक तथ्यों के बहुपरतीय और बहु-कारणात्मक विश्लेषण पर ज़ोर दिया।

इन चिंतकों ने जिन लक्ष्यों और उद्देश्यों के लिए समाज का अध्ययन किया वे अलग-अलग थे। दर्खाइम और वेबर इस बात पर ज़ोर देते थे कि समाजशास्त्र का अध्ययन करते समय एक प्रकार का वैज्ञानिक अलगाव बनाए रखना चाहिए जबकि मार्क्स इस बात में विश्वास करता था कि सिद्धांतों का उपयोग राजनैतिक कार्यों के लिए किया जा सकता है।

18.7 शब्दावली

प्रतिमानहीनता (anomie) — एक ऐसी स्थिति जिसमें सामाजिक नियम निरर्थक हो जाते हैं। मनुष्य अपने आपको अकेले या समाज से कटे हुए महसूस करते हैं

सामूहिक चेतना (collective conscience) — समाज के सदस्यों के सामान्य विश्वास, मान्यताएँ और भावनाएँ

यांत्रिक एकात्मकता और सावयवी एकात्मकता — दर्खाइम के अनुसार यांत्रिक एकात्मकता का आधार है एकरूपता और गहरे सामाजिक बंधन जो कि लघु और पारंपरिक समाजों में देखे जाते हैं। सावयवी एकात्मता अंतर्निभरता और विशेषीकरण पर आधारित है, और आधुनिक, औद्योगिक समाजों में पायी जाती है।

प्रत्यक्षवादी — अनुभव पर आधारित। प्रारंभिक समाजशास्त्र पर प्रत्यक्षवादी प्रवृत्ति का गहरा असर रहा।

18.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

ऐरों, रेमों, (1970). *मेन करेंट्स ऑफ़ सोशियोलॉजिकल थॉट*. भाग 1 और 2, पेंगुइन: लंदन (मार्क्स, दर्खाइम और वेबर से संबंधित भाग पढ़ें।

कोज़र, लुविस, (1971). *मास्टर्स ऑफ़ सोशियोलॉजिकल थॉट आइडियाज़ इन हिस्टॉरिकल एंड सोशल कॉंटेक्स्ट*. हरकोर्ट ब्रेस जोवानोविच: न्यूयार्क (मार्क्स, दर्खाइम और वेबर से संबंधित भाग पढ़ें)

18.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

i) विचार पद्धति शोध तकनीकों का समन्वयन है जिससे किसी विषय का अध्ययन किया जा सकता है। शोध तकनीक वे साधन हैं जो कि विचार पद्धति के अंग हैं।

ii) मार्क्स समाज के विभिन्न समूहों, संस्थाओं, मान्यताओं और विचारधाराओं के बीच अंतर्संबंध, खोजता है। समाज को व्यवस्था मानकर और उसके विभिन्न अंगों के परस्पर संबंधों को देखकर मार्क्स ने समाज का अध्ययन सम्पूर्ण इकाई के रूप में किया।

iii) मार्क्स सामाजिक संबंधों और विचारों को विशिष्ट ऐतिहासिक परिवेश में देखता है। उदाहरण के तौर पर मार्क्स के अनुसार वर्ग-संघर्ष हर ऐतिहासिक युग में पाया जाता है। फिर भी वह इस बात पर जोर देता है कि इस वर्ग संघर्ष का स्वरूप बदलता रहता है। इसीलिए मार्क्स "सापेक्षवादी इतिहासकार" कहलाया जाता है।

iv) क) संघर्ष और अंतर्विरोध

ख) सामाजिक सिद्धांत और राजनैतिक प्रतिबद्धता

बोध प्रश्न 2

i) क) ग़लत

ख) ग़लत

ii) क) सामाजिक तथ्य व्यक्ति पर बाधक होते हैं और व्यक्ति को विशिष्ट प्रकार का बर्ताव करने पर विवश करते हैं। उदाहरण के तौर पर क्रिकेट मैच देखते समय जब दर्शक उत्तेजित होते हैं तब आपका बर्ताव भी अन्य दर्शकों जैसा होगा।

ख) श्रम विभाजन के बारे में लिखते समय दर्खाइम ने देखा कि किस प्रकार का प्रक्रिया सामाजिक एकात्मता बनाने में सहायक होती है। धर्म के संदर्भ में दर्खाइम ने यह दिखाने का प्रयास किया कि किस तरह अनुष्ठान और मान्यताएँ सामाजिक संबंधों को मजबूत बनाने का कार्य करती हैं।

बोध प्रश्न 3

i) क) व्यक्तिपरक अर्थ

ख) आदर्श प्ररूप

ग) मूल्य निर्णय

ii) क) ग़लत

ख) ग़लत